तलाश

फिल्म की शूटिंग बन्द पड़ी है और मन के अंदर जो हाहाकार मचा था, उसका अंत आ गया है। जगमगाती बत्तियों के प्रकाश में जब कलाकार कैमरे के सामने भूमिका निभा रहे थे, तब उठ खड़े हुए मन में अनेक भूत प्रेत। उन्होंने कितना शोर मचाया था मन में....उफ़ कितना चिल्लाया था मैं....बंद करो....बंद करो ....मैंने तो मन के अंदर जगे भूतों को चीख-चीख कर भगाना चाहा परन्तु भाग गये ये सब। सारा सैट उदास नीरस खाली पड़ा है...।

शहर से कुछ थोड़े ही मील दूर हैं बुद्ध के मंदिर....। ढहे हुए परन्तु अनन्त खोज के दृश्य ...। यहीं करनी थी मुझे अपनी फिल्म की शूटिंग।

मेरा सारा दल गाँव के ज़मींदार के यहाँ मेहमान था। बँगले का दरवाज़ा आ कर खोला ज़मींदार की विधवा बहू ने...। मन के अंदर एक चीख उठी...यहाँ है तृप्ति ...जन्म जन्मांतर की खोज का अन्त...।

सवेरे-सवेरे विधवा के बर्फ़ीले हाथ लताओं ओर पौधों को पानी दे रहे थे ...। सौन्दर्य का अद्‌भुत दर्शन...। हरियाली के बीच सफ़ेद कमल!

मैंने लताओं के छोटे सफ़ेद फूल तोड़कर उसके चरणों में रख दिये। उसकी मासूम गोल आँखें सूरजमुखी की भाँति खिल गईं। वह कहने लगी, "देवी नहीं हूँ.....गंगा हूँ मैं।"

मैं, "तब तो सौंदर्य के साथ पवित्रता को भी प्रणाम।"

लड़की, "जल...।"

मैं मुख के पास चुल्लू रख कर झुक गया। चाँदी के लोटे से मुख में जल जाने लगा और प्यासी आँखों से अमृत उंड़ेला जाने लगा मेरी आँखों में...।

लड़की, "ओह...।"

लोटे का जल समाप्त हो चुका था, परन्तु अमृत!.....वह चली गई। मन ने अपना चैन बुरी तरह खो दिया।

तीन दिनों के बाद शूटिंग पूर्ण कर एक पराजय का एहसास लेकर मैं नौकरों से सामान बँधवा रहा था कि वह थाली में थोड़े मावे के पेड़े लेकर अंदर घुस आई।

लड़की, "प्रसाद लीजिये। मैं समझ आने के बाद कई धार्मिक पुस्तकें पढ़ती रही हूँ...। परन्तु कहीं भी मुझ जैसी नारी का सम्मान उचित नहीं माना गया है।"

मैं, ''हूँ!''

लड़की, ''एक ही बार फूलों की भेंट प्राप्त कर ...अजीब दुविधा में पड़ गया मन!''

मैंने उससे पूजा की थाली लेकर आँखों पर लगाई और उसे पलंग पर बैठने के लिये कहा। सूरजमुखी खिला ही रहा।

वह नीचे जमीन पर बैठ गई। हाथ जोड़कर कहने लगी, ''भिक्षुणी, बुद्ध की खोज में रहती है। आपको बुद्ध की भूमिका निभाते हुए देखा और मन ने कहा यही है मेरे प्रश्नों को समझने वाला महान देवता...''

मैंने कहा, ''कौन से प्रश्न हैं देवी! लेकिन बुद्ध की भूमिका निभाना एक बात है और स्वयं बुद्ध बन जाना दूसरी बात है। केवल यह मन, बुद्ध के मन की भाँति बेचैन है और तृप्ति की तलाश में परेशान रहता है...''

लड़की, ''मैं नहीं मानती।''

मैं, ''इसका आधार?''

लड़की, ''आपको किसी के साथ मन को उंड़ेलते हुए, मैंने सुन लिया है। आप कह रहे थे कि कला की अखंड तपस्या के बाद मैंने जो ज्ञान प्राप्त किया है, वह प्राणी मात्र को देना चाहता हूँ...''

मैं, ''देवी ने और भी कुछ सुना था?''

लड़की, ''मैंने सुना था...यदि गंगा जैसी नारी पर्दे पर काम करे तो समस्त मानवीय मलीनता की कड़ियाँ तोड़कर, सुख से भर दे संसार को ...।''

मैं, ''परन्तु आपके प्रश्न?''

लड़की, ''गंगा ने बहुत अधिक पुस्तकें पढ़ी हैं, फिर भी अपने मन और बुद्धि के विकास के लिये बैचेनी परेशान कर रही है...। क्यों...?''

''गंगा''। अचानक दूर से किसी ने आवाज दी और डीर हुई आँखों तथा तेज कदमों से गंगा चली गई! अच्छा ही हुआ, नहीं तो उसके प्रश्न का उत्तर मेरे पास कहाँ था? अथवा अन्य किसी के पास भी है क्या ऐसे प्रश्न का उत्तर!

भारी मन और आँखों में देवी की मूर्ति लेकर समस्त मंडली सहित अपने स्थान पर पहुँचने में देर नहीं लगी। मैंने सोचा, एक अपने जैसा नभचर - तृप्ति के लिये व्याकुल जीव मुझ से मिला था और बस एक स्वप्न बन कर रह गया।

अचानक एक दिन स्वप्न साकार हो उठा। वह खड़ी थी...सजीव...कोमल...तेजस्वी और आनंदमयी। कहाँ, कौन से साजों में संगीत की धुनें लरज़ उठीं, मैं नहीं जानता। केवल इतना ही ज्ञान रहा कि वह मेरे पैरों के पास बैठ कर, रज उठा कर अपने मस्तिष्क पर लगा रही थी। काली किनारी वाली साड़ी का पल्लू कुछ ऊपर उठाकर उसने कहा,

''समाज व धर्म के बँधन, अपने लिये तोड़ना कठिन थे...परन्तु मैं आपकी तपस्या से प्राप्त ज्ञान को प्राणी मात्र तक पहुँचाने में आपका हाथ बँटाने के लिये सब बंधन तोड़ कर आई हूँ।''

मैं, ''परन्तु ...।''

लड़की, ''पिछले सभी द्वार बन्द हैं। आगे यदि काग़ज़ की दीवार ने भी मंज़िल तक पहुँचने में रुकावट डाली तो सिर टकराकर स्वयं को समाप्त करना ही पड़ेगा।''

ooo ooo ooo

एक बेचैन मन को दूसरे बेचैन मन से मिल कर तृप्ति का एहसास हुआ। गंगा मेरी फ़िल्मों में काम करने लगी। संसार ने उसकी कला से जो सुख प्राप्त किया, उसके लिये हर गली के मोड़ पर चित्रित कर उसे खड़ा किया गया। एक छोटे से नगर की निवासी गंगा, कई इंसानों के दिलों की धड़कन बन गई। गंगा को तृप्ति का एहसास हुआ और मैंने उसके फूल जैसे कोमल शरीर को पूजा और प्यार का केन्द्र मान कर तृप्ति का एहसास नहीं पाया, ऐसा कहना भी झूठ होगा।

एक रात को मैंने गंगा से कहा, ''गंगा! यहाँ आकर तुझे कभी अपने किये पर पश्चाताप तो नहीं हुआ है?''

गंगा, ''कैसा प्रश्न पूछ रहे हैं, स्वामी जी? नदी जब सागर में मिल कर विशाल हो जाती है, तब क्या वह पछताती होगी?''

मैं, ''...ओह...परन्तु नदी का अपना अस्तित्व सागर में स्वाहा हो जाता है...।''

गंगा, ''लेकिन किस में? किसी नाले अथवा नाली में नहीं, परन्तु समुद्र सागर में ...जो सूर्य की अग्नि में स्वयं को तपा कर बादल बन, प्राणी मात्र पर बरस कर, सुख बरसाता रहता है संसार पर।''

मैं, ''धन्य हो तुम देवी! तुम्हारा यह विश्वास, तुम्हारी तपस्या। प्रत्येक आँच व लपट को प्रकाशित कर प्रकाश फैला रही हो, मेरे मन के अन्दर!''

गंगा, ''और मैं...मैं तो समझ रही हूँ कि मैं स्वयं ही एक कांति बन गई हूँ, जिसे देखने से हर प्राणी को आनन्द का एहसास हो रहा है।''

मैं, ''इतना सुख इतना आनन्द...।''

परन्तु एक दिन सब कुछ बदल गया...। कड़ी सर्दियों की एक रात...। गंगा मेरी एक फिल्म में अभिसारिका की भूमिका निभा रही थी। शाट्स लिये जा रहे थे। सदानन्द, सुन्दर जवान नायक, बर्फ़ीले शरीर वाली अभिसारिका गंगा को बाँहों में उठा कर फूलों की सेज पर रख रहा था। एक क्षण के लिये उसके मुख ने गुलाबी होठों का सहारा पाया...अथवा शायद मेरी दृष्टि का भ्रम था...परन्तु यह क्या हो गया मेरे मन में! यह आग कहाँ से भड़क उठी!!....सारा शरीर पसीने से तर हो गया और पैरों के नीचे मानो पृथ्वी

डोलने लगी... ! एक महाभारत चालू हो गया मन के भीतर... ।

मैंने उसे बाँह से पकड़ कर अपनी छाती पर लिटा कर कहा, "तुम मेरी हो तृप्ति। केवल मेरी।"

गंगा, "जी हाँ, सारी सम्पूर्ण उतनी ही आपकी, जितने आप मेरे हैं, स्वामी!"

प्यासा मन बूंद पीकर तृप्त हो गया। मन का पंछी डुबकियाँ खाने लगा। डूबने की नौबत आ गयी थी।

परन्तु यह आकाशीय बुलावा... ।

गंगा, "आपने मुझे तृप्ति कहा... ।"

मैं, "हाँ गंगा तुम हो मेरी तृप्ति, अनन्त आनन्द।"

गंगा, "नहीं, स्वामी!"

मैं, "उफ़ ...यह कौन सा महारथी मेरे रथ को युद्ध में लाकर स्वयं ऊर्ध्व खड़ा हो गया है!"

गंगा, "स्वामी, तृप्ति मंजिल नहीं..."

मैंने कहा, "तब मैं क्यों बेचैन हो गया हूँ।"

गंगा की आँखें थीं, दो तेजस्वी चंन्द्रमा!

उसने कहा, "तृप्ति तो समानान्तर रेल की पटरियों की भाँति साथ है, परन्तु उनका मिलन है भ्रम!"

मैं, "तो सत्य क्या है, गंगा?"

गंगा, "सत्य है तलाश-खोज..! यह तलाश अनंत है, कहीं पूर्ण नहीं होती... । वह चाँदनी जैसी नज़र मुझ पर फेंक कर मेरे कमरे से बाहर चली गई। मैंने उस प्रकाश को नारी कह कर स्वयं को क्या कुछ समझा था?

लेकिन रात भर एक अजीब प्रकार का संग्राम मन के भीतर जारी रहा...

सवेरे के प्रकाश में सेना जो हार कर गिरी हुई है, वह है अभिसारिका को तृप्ति कहने का शौक! उसे सम्पत्ति समझने की भूल!!

अभिसारिका तृप्ति नहीं है। वह अनन्त शक्ति है जिसके पास एक मन है। मन जो बेचैन है और है तृप्ति की तलाश में!

अनुवाद : खीमन यू. मूलाणी

❑❑❑